प्रकरण पैंतीस

"संसार का यह सुदूर कोना"

यद्यपि प्रभुपाद एक साल से अमेरिका से बाहर थे, तथापि कृष्ण की कृपा से कृष्णभावनामृत आन्दोलन उन्नति करता रहा था, और उनके प्रति भक्तों के लगाव में वृद्धि हो रही थी। उनके शिष्यों ने उनकी भारत की विजय यात्रा के विवरण पढ़े थे और चित्र देखे थे और इससे उन्हें अपना प्रचार बढ़ाने की प्रेरणा मिली थी। प्रत्येक अमरीकी केन्द्र में नये भक्त भरती हो रहे थे और वे वरिष्ठ भक्तों से प्रभुपाद की शिक्षाओं को ग्रहण कर रहे थे। सैकड़ों नवागन्तुक श्रील प्रभुपाद को अपना आध्यात्मिक गुरु स्वीकार कर चुके थे और वे उत्सुकता से दीक्षा लेने की प्रतीक्षा कर रहे थे।

यह १९६५ में प्रभुपाद के अकेले अमेरिका पहुँचने से कितना भिन्न था। बिना धन और मन्दिर के वे ठंडी सड़कों में घूमते थे और लोग उनकी उपेक्षा करते थे। कभी कभी वे अमेरिका छोड़कर भारत लौटने की बात सोचने लगते थे। किन्तु अपने पूर्ण विश्वास में वे अटल थे। और अब, छह वर्ष से भी कम समय बाद अमेरिका के दर्जनों इस्कान केन्द्रों में सैकड़ों शिष्य उनकी पूजा करते थे और उनके स्वागत के लिए भावविह्वल होकर उमड़ पड़ते थे।

लास ऐंजिलेस
जून २६, १९७१

प्रभुपाद ने जब एक वर्ष पूर्व लास ऐंजिलेस छोड़ा था, तो वहाँ की राजनीतिक उथल-पुथल से वे मन में चिन्तित थे, किन्तु वापस आने पर उन्होंने अपने भक्तों को प्रकृतिस्थ पाया। वे पूरी धार्मिक निष्ठा के साथ सार्वजनिक रूप से कीर्तन करने, *बैक टु गॉडहेड* पत्रिका का वितरण करने और रुक्मिणी-द्वारकाधीश श्रीविग्रह की पूजा करने के उनके आदेशों का पालन कर रहे थे। लास ऐंजिलेस के तड़क-भड़क के साथ सजे मन्दिर में प्रभुपाद ने एक बड़ा दीक्षा-समारोह सम्पन्न किया, जिसमें उन्होंने दर्जनों नये शिष्य बनाए।

२७ जून को पाँचवी वार्षिक रथयात्रा के लिए प्रभुपाद लास ऐंजिलेस से सैन फ्रांसिस्को गये। हवाई अड्डे पर दो सौ अनुयायियों ने उनका स्वागत किया।

"आपके कितने भक्त हैं?" एक संवाददाता ने पूछा।

"अनगिनत," प्रभुपाद बाले, "कुछ स्वीकार करते हैं और कुछ स्वीकार नहीं करते। आप स्वीकार कर लें कि आप भगवान् कृष्ण के सेवक हैं, और आपका जीवन सफल हो जायेगा।"

सैन फ्रांसिस्को में दो दिन रुकने के बाद प्रभुपाद लास ऐंजिलेस लौटे और १६ जुलाई को हवाई जहाज से डिट्रायट गये। मिडवेस्ट में प्रभुपाद का जी.बी. सचिव, भगवान् दास अपने क्षेत्र में जोर से प्रचार करता रहा था और सेंट लुई, शिकागो तथा अन्य नगरों में उसने केन्द्र स्थापित किये थे। लगभग तीन सौ भक्त, जिनमें से अधिकतर भक्तों ने प्रभुपाद को कभी नहीं देखा था, उनका स्वागत करने के लिए हवाई अड्डे पर एकत्रित हुए।

सुरेश्वर : *समस्त मध्य पश्चिम अमेरिका और पूर्वी कनाडा से भक्तजन डिट्रायट मेट्रो हवाई अड्डे पर श्रील प्रभुपाद का स्वागत करने के लिए आये थे। स्वागत-कक्ष के मध्य में एक लाल-सुनहरा सिंहासन रखा था और भक्तजन प्रभुपाद के आगमन की प्रतीक्षा करते हुए हरे कृष्ण कीर्तन और नृत्य कर रहे थे। जब अन्त में वायुयान उतरा, तो आनन्द की बाढ़-सी आ गई। वायुयान से उतरने की सीढ़ी लगा दी गई, लेकिन हम श्रील प्रभुपाद को देख नहीं सके। मैं चिंतित होने लगा—वे कक्ष में कब प्रविष्ट होंगे? अचानक कोलाहल होने लगा और मैं इधर-उधर देखने लगा। भक्तजन नस्तमस्तक हो रहे थे।*

उरुक्रम : *श्रील प्रभुपाद कक्ष में सूर्य जैसी चमक-दमक के साथ प्रविष्ट हुए और हर एक भक्त फर्श पर दण्डवत् होकर उन्हें प्रणाम करने लगा। यह हर बार जैसा नहीं था, जब हम एक साथ उनके सामने नतमस्तक होते थे; इस बार तो ऐसा लगता था जैसे कोई अत्यधिक शक्ति हमसे आ टकराई हो और हमें घुटनों पर फेंके दे रही हो। जब मैं खड़ा हुआ तो मुझे अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हुआ। प्रभुपाद आ गये थे। कमरे में लगभग हर एक रो रहा था।*

इन्द्रद्युम्न : *मैंने प्रभुपाद की पहली झलक अपने कैमरे के शीशे से प्राप्त की और मुझे लगा कि वे ठीक वैसे ही लगते थे जैसे वे अपने चित्रों में दिखते थे। मैंने उन्हें केवल चित्रों में देखा था और अब वे ठीक चित्रों जैसे दिख रहे थे, केवल चलते-फिरते हुए। सभी भक्त खुशी में चिल्ला रहे थे और पृथ्वी पर दण्डवत् प्रणाम कर रहे थे। यह दिव्य, भावविह्वलता का क्षण था। मैं इधर-उधर पुराने भक्तों को देख रहा था—उनमें श्रील प्रभुपाद के लिए कितना प्रेम था! और मैं अपने आपको अयोग्य और पापमय अनुभव कर रहा था।*

उरुक्रम : *प्रभुपाद शक्तिशाली लग रहे थे, और साथ ही एक बहुत आश्चर्यजनक पुष्प की भाँति कोमल और सुकुमार भी। जिस समय वे मंद गति से चल रहे थे, तो भक्तों ने पंक्तिबद्ध खड़े होकर उनके लिए एक गलियारा जैसा भार्ग बना दिया। वे कीर्तनानन्द*

महाराज के पास गये, उन्होंने उन्हें माला पहनाई और आलिंगन किया। कीर्तनानन्द महाराज हर्ष के आँसू बहा रहे थे और पिता की बगल में एक छोटे बालक के तुल्य लग रहे थे। तब प्रभुपाद भगवान के पास पहुँचे और उन्होंने उसके सिर को थपथपाया। तब उन्होंने भगवान को गले लगाया, जो उस छोटे बालक की तरह रोने लगा जैसा उसने अपने पिता को लम्बे अरसे बाद देखा हो।

विश्वकर्मा : *मैं देर से पहुँचा। जब मैं वहाँ पहुँचा, तो श्रील प्रभुपाद की ओर देखने में मुझे डर लगा, क्योंकि मुझे लगा कि मैं इतना पतित हूँ कि भगवान् के शुद्ध प्रतिनिधि की ओर देखने योग्य नहीं हूँ। अत: उधर देखने से भयभीत, मैं भक्तों की दीवार के पीछे खड़ा हो गया। अन्त में मैंने अनुभव किया कि यह हास्यास्पद है, क्योंकि नेत्रों की सार्थकता तो कृष्ण के शुद्ध भक्त के रूप को देखने में है। मैंने अपना सिर उठाया और उन्हें प्याले से पानी पीते हुए व्यास-आसन पर बैठे देखा। मैंने किसी को इस तरह पानी पीते हुए पहले कभी नहीं देखा था—प्याले को बिना मुख से लगाए हुए। प्याले से पानी चमकीली रजतधारा की तरह सीधे उनके मुख और गले में गिर रहा था और कुछ ही घूँटों में उन्होंने पूरा प्याला समाप्त कर दिया। वे आध्यात्मिक क्षेत्र के महान् ऋषि प्रतीत होते थे और जिस समय हर एक कीर्तन में लीन था, वे मुसकराते हुए प्रसन्नतापूर्वक भक्तों को देख रहे थे। हर एक दिव्य प्रसन्नता से अभिभूत था और भक्तों में से आधे से अधिक रो रहे थे, जिनमें मैं भी शामिल था।*

प्रभुपाद ने बोलना आरम्भ किया।

"यह बहुत संतोषजनक है कि इतने सारे भक्त, लड़के और लड़कियाँ इस महान् आन्दोलन में, कृष्णभावनामृत आन्दोलन में भाग ले रहे हैं। यह बहुत महत्त्वपूर्ण आन्दोलन है, क्योंकि यह मानव सभ्यता का संशोधन कर रहा है। आधुनिक सभ्यता का यह बड़ा दोष है कि लोग इस शरीर को आत्मा समझ रहे हैं। और इस आधारभूत गलती के कारण हर चीज गलत होती जा रही है। इस शरीर को आत्मा समझना ही सारी समस्याओं की जड़ है। बड़े बड़े दार्शनिकों, वैज्ञानिकों, धर्माचार्यों और वैचारिकों में से कोई नहीं जानता कि भूल क्या है।

"हाल में ही मैं मास्को में था। वहाँ भारतीय विद्या के एक प्राचार्य, प्रोफेसर कोटोव्स्की से मेरी अच्छी बातें हुईं। वे कह रहे थे कि, 'स्वामीजी, इस शरीर के नष्ट होने पर हर चीज समाप्त हो जाती है।' इसलिए मुझे आश्चर्य हुआ कि एक विद्वान प्राचार्य, जो इतने दायित्वपूर्ण पद पर आसीन थे, शरीर और आत्मा के बारे में नहीं जानते थे कि वे किस तरह एक-दूसरे से भिन्न हैं और आत्मा किस प्रकार एक शरीर से दूसरे शरीर में स्थानान्तरण करता है..."

जिस समय प्रभुपाद बोल रहे थे, उसी समय सार्वजनिक ध्वनि प्रसारण यंत्र से यह सूचना प्रसारित हुई कि प्रस्थान-कक्ष को अगली उड़ान के लिए खाली कर देना है। "क्या वे हम लोगों के बारे में कुछ कह रहे हैं?" प्रभुपाद ने पूछा, "क्या हमें व्याख्यान समाप्त कर देना चाहिए? अच्छा, ठीक है, आइये चलें।"

• • •

उस संध्या को, डिट्रायट के इस्कान केन्द्र के मन्दिर-कक्ष में श्रील प्रभुपाद भगवान् जगन्नाथ, सुभद्रा और बलराम के श्रीविग्रहों के समक्ष अपने व्यास-आसन पर बैठे थे। एक भक्त कीर्तन करा रहा था और कक्ष में बैठे अपने शिष्यों की ओर इधर-उधर देखते हुए प्रभुपाद करताल बजा रहे थे। उन्हें नाचते-गाते देखकर, वे प्रसन्नतापूर्ण सिर हिला रहे थे। कीर्तन के बाद उन्होंने प्रवचन दिया।

"जरा देखो, किस तरह उनके चरित्र का निर्माण हो रहा है, वे किस तरह शुद्ध बन रहे हैं, उनके चेहरे किस प्रकार भव्य बनते जा रहे हैं। यह व्यवहार-सुलभ है। इसलिए हमारी प्रार्थना है कि केन्द्र से पूरा लाभ उठाइए—आप यहाँ आइये। इसका मार्गदर्शन मेरा एक सबसे अच्छा शिष्य भगवानदास कर रहा है। अतः वह और अन्य भक्त आपकी सहायता करेंगे। आप नियमित रूप से इस मन्दिर में आइये और इससे लाभ उठाइए।"

अपने व्याख्यान के बाद प्रभुपाद ने श्रोताओं को प्रश्न पूछने को कहा। बहुलाश्व ने अपना हाथ उठाया, "श्रील प्रभुपाद, वह कौन-सी वस्तु है, जिससे आप सर्वाधिक प्रसन्न होंगे?"

"हरे कृष्ण का कीर्तन करो," प्रभुपाद ने उत्तर दिया और सभी भक्त सहज ही चिल्ला उठे, "जय! जय!"

प्रभुपाद : "यह सब से आसान वस्तु है। आप कीर्तन करो। मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। बस। मैं तुम्हारे देश में कीर्तन करने आया हूँ इसलिए कि तुम भी मेरे साथ कीर्तन करोगे। कीर्तन करके तुम मेरी सहायता कर रहे हो, इसलिए मैं प्रसन्न हूँ।"

"यह प्रवृत्ति बहुत अच्छी है कि तुम मुझे प्रसन्न करना चाहते हो। यह बहुत अच्छा है। और मुझे प्रसन्न करना कठिन नहीं है। चैतन्य महाप्रभु ने कहा है, 'मेरे आदेश के अधीन तुम जाओ, धर्मोपदेश करो और आध्यात्मिक गुरु बनो।' और वह आदेश क्या है? आदेश है कि, 'तुम जिस किसी से मिलो, उससे कृष्ण के बारे में बातें करो।' "

प्रभुपाद ने बल दिया कि यदि कोई धर्मोपदेश करना और कृष्ण का प्रतिनिधित्व करना चाहता है, तो वह कृष्ण के सन्देश को बदल नहीं सकता, वरन् उसे उसी को दुहराना होगा, जो कृष्ण ने कहा है। "मैं यहाँ पहली बार आया हूँ," प्रभुपाद ने कहना जारी रखा, "किन्तु

मेरे पहले भगवानदास ने यहाँ के कार्यक्रम की व्यवस्था की है। और उसे श्रेय किस बात का है? उसने वही किया है, जो मैंने उससे कहा था। बस। यह बहुत अच्छा है। लास ऐंजिलेस में भी कार्यक्रम बहुत अच्छी तरह से चल रहा है। वहाँ का मेरा कार्यवाहक शिष्य करणधर है। वह यहाँ उपस्थित है। वह केवल वही कर रहा है, जिसे करने का मैंने आदेश दिया है, और वह बहुत अच्छी तरह से चला रहा है—अति श्रेष्ठ! जो कोई भी मन्दिर में आता है, वह मन्दिर पर, वहाँ के कार्यकलापों पर, शिष्यों पर मुग्ध हो जाता है। यही तरीका है काम करने का। इसी को परम्परा-प्रणाली कहते हैं। अपने आप कोई मिलावट मत करो।"

उस शाम जब प्रभुपाद मन्दिर से जा रहे थे, तो उनके एक शिष्य की माँ उनके पास आई और बोली, "आप जानते हैं कि ये बच्चे सचमुच आपकी पूजा करते हैं।"

"हाँ," प्रभुपाद ने कहा, "यही हमारी प्रणाली है। मैं भी अपने गुरु महाराज की पूजा करता हूँ।" प्रभुपाद के आसपास खड़े भक्तों ने एक-दूसरे को देखा और वे मुसकराए। यद्यपि उस महिला का प्रयास यह दिखाने का था कि प्रभुपाद के शिष्यों का उनकी पूजा करना एक असामान्य बात थी, पर प्रभुपाद ने इसे मामूली बात की तरह लिया। व्यक्ति को अपने गुरु की पूजा करनी ही चाहिए। यह वैष्णव आदर्श था और इस पर आश्चर्य करने की कोई बात नहीं थी।

• • •

संयुक्त राज्य में श्रील प्रभुपाद के इतने केन्द्र हो गये थे कि हर एक पर जाना सम्भव नहीं था। उनके भारत में एक वर्ष के दौरान वेस्ट कोस्ट पर फ्लोरिडा, टेक्सास, मिडवेस्ट, दि ईस्ट में कई नये केन्द्र खुल गये थे। प्रभुपाद कहते थे कि एक धनाढ्य व्यवसायी की तुलना में उनके पास अधिक प्रतिष्ठान और अधिक आवास थे। उन्होंने ताना मारा कि यदि वे अपने हर 'आवास' पर रहना चाहें, तो एक वर्ष-भर में सभी पर नहीं जा पाएँगे। और भारतीय श्रोताओं को वे विशेष रूप से अपने केन्द्रों का मासिक व्यय सुनाया करते थे।

प्रभुपाद को यद्यपि इस्कान की प्रगति पर गर्व था, पर वे कभी अपने पर गर्व नहीं करते थे; इस्कान को अपने वैयक्तिक आनन्द-चैन के लिए इस्तेमाल करने का उन्हें विचार भी नहीं आता था। वे जब कभी किसी केन्द्र पर जाते थे, तो उन कमरों में ठहरते थे जिनकी व्यवस्था प्राय: बिल्कुल अन्तिम क्षणों में की जाती थी। ये कमरे अक्सर असुविधाओं से ओत-प्रोत होते थे, जैसे शोरगुल करने वाले पड़ोसी या अकुशल रसोइये। पचहत्तर वर्ष की अवस्था में लगातार यात्रा करना उनके स्वास्थ्य और सुविधा के लिए आदर्श कार्य-व्यवस्था मुश्किल से कही जा सकती थी।

प्रभुपाद के संघ को जो थोड़ी-सी सफलता मिली थी, उस पर उन्हें न तो आत्मसंतोष था और न उस सफलता के लिए वे कोई श्रेय लेना चाहते थे। प्रत्युत, वे कहते थे कि यह सफलता उनके आध्यात्मिक गुरु और उनके पूर्वगामी आध्यात्मिक गुरुओं के कारण थी। इस्कान का संसार में प्रभाव अब भी बहुत थोड़ा था; लोग इसे एक लघु, आकर्षक धार्मिक सम्प्रदाय समझते थे। किन्तु पूर्वगामी आचार्यों की कृपा से इसकी उन्नति हो रही थी। प्रभुपाद अधिकाधिक शिष्यों को दीक्षित कर रहे थे और इस कार्य की सम्भावनाएँ असीमित थीं।

भगवान् चैतन्य के प्रमुख अनुयायियों में से एक, जीव गोस्वामी ने चेतावनी दी थी कि किसी आध्यात्मिक गुरु को बहुत अधिक शिष्य स्वीकार नहीं करने चाहिए; अधिक नवदीक्षित शिष्यों से आध्यात्मिक गुरु को कष्ट उठाना पड़ सकता है। तब भी, १९७१ की ग्रीष्म ऋतु में अपनी संयुक्त राज्य की यात्रा के मध्य प्रभुपाद ने पहले से कहीं अधिक शिष्यों को दीक्षा दी। भगवान् चैतन्य के अधिकृत प्रतिनिधि के रूप में वे भक्तों की संख्या में अधिकाधिक वृद्धि करना चाहते थे। वे इसके खतरे से अवगत थे, किन्तु वे इसकी बड़ी आवश्यकता से भी अवगत थे, जैसाकि उन्होंने *नेक्टर आफ डिवोशन* में लिखा था।

> एक बात यह है कि शिष्यों की संख्या में वृद्धि किये बिना कृष्णभावनामृत-मत का प्रचार नहीं हो सकता, अत: कभी कभी खतरा लेकर भी चैतन्य महाप्रभु की परम्परा का संन्यासी ऐसे व्यक्ति को भी स्वीकार कर सकता है, जो शिष्य बनने के लिए पूर्णत: योग्य नहीं है। बाद में ऐसे सच्चे गुरु की कृपा से शिष्य में धीरे-धीरे सुधार होने लगता है। पर जो गुरु शिष्यों की संख्या में वृद्धि केवल किसी प्रतिष्ठा या झूठे सम्मान के लिए करता है, वह कृष्णभावनामृत का प्रचार करने में निश्चित रूप से असफल होगा।

किसी भावी शिष्य की दीक्षा के लिए तैयारी का प्रभुपाद के परीक्षण का मानक यह था कि अभ्यर्थी ने कम-से-कम छह महीने तक चार नियमों का पालन और प्रतिदिन सोलह मालाएं जप अवश्य किया हो और मन्दिर के अध्यक्ष तथा जी.बी.सी. सचिव की संस्तुति उसके पक्ष में हो। प्रभुपाद उन सभी को दीक्षा के लिए स्वीकार करते थे, जो इन शर्तों को पूरा करते थे और वे आशा करते थे कि उनके शिष्य दीक्षा के समय की गई प्रतिज्ञाओं के प्रति सच्चे और निष्ठावान् रहेंगे।

बावजूद इसके कि प्रभुपाद के शिष्यों की संख्या बढ़ रही थी, वे हर एक के हृदय में गहराई से बसते थे। यद्यपि कुछ को लम्बे समय तक उनके संसर्ग में रहने का आनन्द प्राप्त

था, उनके सैकड़ों शिष्यों में से अधिकतर उन्हें दूर से ही जानते थे। फिर भी हर एक को विश्वास था कि प्रभुपाद उसके अपने थे। हर एक उन्हें 'मेरा आध्यात्मिक गुरु' कह सकता था। उन्हें हर एक 'प्रभुपाद' कह सकता था और अपने आपको सर्वाधिक प्रिय मित्र और शुभेच्छु के निकट अनुभव कर सकता था—ऐसे जो उन्हें मृत्यु से बचा रहे थे। शिष्य जानते थे कि प्रभुपाद कृष्ण के साक्षात् प्रतिनिधि और भगवान् चैतन्य के सन्देश के सर्वाधिक अधिकृत आचार्य थे। जो निष्ठावान थे, वे निश्चित रूप से जानते थे कि प्रभुपाद के साथ उनका सम्बन्ध आध्यात्मिक था, जिसे भौतिक या भौगोलिक कारणों से विच्छिन्न या सीमित नहीं किया जा सकता था। यदि वे प्रभुपाद के आदेशों के सामने अपने आपको समर्पण करते हैं, तो उनके हृदय में स्थित कृष्ण उनकी प्रगति में सहायक होंगे। यदि वे निष्ठावान होंगे, तो श्रील प्रभुपाद का श्रेष्ठतर शिष्य बनने में कृष्ण उनकी सहायता करेंगे।

प्रभुपाद के लिए भक्तों का प्रेम कोई अनिश्चित भाव नहीं था। उन्हें वे कृष्ण की सेवा में लगा रहे थे और भक्तों को उसके दिव्य फलों की प्रत्यक्ष अनुभूति हो रही थी। पर कोई भक्त ही श्रील प्रभुपाद के व्यक्तित्व को समझ सकता था या यह रहस्य कि उनके प्रति शिष्यों का आकर्षण कितना गहरा था या यह तथ्य कि वे प्रभुपाद के प्रति अपने आपको कितना ऋणी मानते थे। इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि डिट्रायट हवाई अड्डे पर दर्शकगण को श्रील प्रभुपाद का उन्मादजनक स्वागत करने वाले भक्तों की भावविह्वलता समझ में न आई हो।

• • •

न्यूयार्क सिटी
जुलाई १९, १९७१

डिट्रायट के बाद प्रभुपाद बोस्टन गये और वहाँ से उन्होंने न्यूयार्क की उड़ान पकड़ी, जहाँ भक्तों का एक दूसरा विशाल समुदाय इकट्ठा हुआ था। 'न्यूयार्क डेली न्यूज' में हवाई अड्डे पर उनके आगमन का विवरण चित्रों सहित प्रकाशित हुआ और 'स्वामी, वे तुमसे कितना प्रेम करते हैं' शीर्षक लेख भी छपा।

न्यूयार्क मन्दिर के अध्यक्ष भवानन्द ने ब्रुकलिन केन्द्र के मन्दिर-कक्ष को चमकदार रंगों से सजाया था। प्रभुपाद का व्यासासन विशेष मिश्रण था—पट्टेदार ऊनी कपड़े, धारीदार, फूलदार चौकड़ी वाले कपड़े और चूने से मिले हुए काले, श्वेत और लाल रंगों का प्रभुपाद को यह बहुत पसन्द आया।

ब्रूकलिन मन्दिर में दो सौ भक्त एकत्रित हुए, जिन में से अधिकतर दीक्षा के लिए एक वर्ष से भी अधिक समय से प्रतीक्षा कर रहे थे और प्रभुपाद ने वहाँ लगातार पाँच दिनों तक

दीक्षा समारोह किया और हर दिन लगभग दो दर्जन शिष्यों को दीक्षित किया। एक के बाद एक युवा पुरुष और स्त्रियां रंगबिरंगे व्यास-आसन पर आसीन प्रभुपाद के पास अपनी दीक्षा की गुरियामाला और आध्यात्मिक नाम प्राप्त करने के लिए जाते थे। जो ब्राह्मण दीक्षा पाने वाले थे, वे एक-एक करके प्रभुपाद के कमरे में गायत्री मंत्र सीखने के लिए जाते थे।

मधुमंगल : *मैं प्रभुपाद के कमरे में गया और वहाँ मैंने उन्हें प्रणाम किया। "यहाँ आओ," उन्होंने कहा। इसलिए मैं उनके निकट बैठ गया। वे मुझे गायत्री मंत्र सिखाने लगे और मैं उन्हें देख रहा था। सूर्य ठीक उनके सिर के पीछे था। वे एक पर्वत जैसे दिख रहे थे, हिमालय जैसे और मैं एक छछूंदर या पत्थर जैसा था। वे बहुत महान् थे और मैं नगण्य दिख रहा था।*

रिक्तानंद : *प्रभुपाद मेरी ओर देखने के लिए मुड़े और उनके नेत्र सम्मोहनकारी द्रव के असीम कुंड जैसे प्रतीत हो रहे थे। मैं जानता था कि उनका ध्यान सदैव कृष्ण पर केन्द्रित रहता था और उनके नेत्रों से वह आनन्द प्रतिबिंबित होता था। उन्होंने मुझ से कुछ कहा और मैंने कहा, "नहीं, महोदय," उन्हें "महोदय" कहना स्वाभाविक लगता था और वे प्रसन्न मालूम होते थे कि मैंने ऐसा कहा था। तब बहुत स्पष्ट, कोमल, स्थिर स्वर में वे मुझे गायत्री मंत्र सिखाने लगे। तब उन्होंने यज्ञोपवीत लिया और बड़ी सुन्दरता और सही कर-विन्यास के साथ उसे मेरे कंधे के आर-पार और गले में पहनाया। "अब" वे बोले, "तुम एक ब्राह्मण हो।"*

दैवी शक्ति : *प्रभुपाद ने गायत्री मंत्र एक कागज के टुकड़े पर लिख रखा था और जब वे मुझे वह सिखा रहे थे तो उनके नेत्र बन्द थे। उनका अनुसरण करते हुए मैं शब्द-शब्द करके उसे दुहरा रही थी। जब वे तीसरी पंक्ति पर पहुँचे, तो 'गुरुदेवाय' कहने के स्थान पर वे पाँचवी पंक्ति का शब्द बोल गये। मेरी समझ में नहीं आया कि उनका अनुकरण करूँ या जो कागज पर लिखा था उसे कहूँ। इसलिए मैंने वही कहा जो कागज पर लिखा था और तब प्रभुपाद ने तुरन्त अनुभव कर लिया कि उन्होंने क्या किया था और उसे बदल दिया। लेकिन अचानक मुझे अनुभव हुआ कि मंत्रों का शुद्ध जप उतना महत्त्वपूर्ण नहीं था। प्रभुपाद कृष्ण के ध्यान में डूबे थे और यद्यपि उनके उच्चारण में प्रत्यक्षतः कोई भूल हुई थी, पर वे फिर भी सही थे। मैंने समझ लिया कि प्रेमाभक्ति की वास्तविक पूर्णता प्रभुपाद का अनुगमन करने में थी।*

जब मैंने अपना गायत्री मंत्र ले लिया मैंने प्रभुपाद से पूछा कि क्या मैं कुछ प्रश्न कर सकती हूँ और उन्होंने कहा—हाँ। "श्रील प्रभुपाद" मैंने कहा, "मैं पूर्ण मनोयोग से आपकी सेवा नहीं कर सकी हूँ। मैं आपकी सेवा के लिए क्या कर सकती हूँ?" मेरी प्रार्थना थी कि वे अपनी व्यक्तिगत सेवा के लिए मुझे कोई विशेष कार्य दें। "हरे कृष्ण

जपो," उन्होंने केवल इतना कहा।

"क्या कोई और भी चीज है?" मैंने पूछा। वे बोले, "क्या तुम्हारा विवाह हो गया है?" मैंने कहा, "हाँ," तो उन्होंने कहा, "अपने पति की सेवा करो।"

मैंने कहा, "मेरे और मेरे पति के बीच नहीं बनती।" तो उन्होंने कहा, "पुजारी बनो, करने को बहुत-सी चीजें हैं।"

उनके उत्तर से मेरी सारी कठिनाई का समाधान निकलता मालूम हुआ। पहला स्थान हरे कृष्ण जपने का हैं। और उसके साथ अन्य बहुत-सी सेवाएँ हैं। यदि कोई उनमें से एक सेवा नहीं करता, तो वह दूसरी कर सकता है—"करने को बहुत-सी चीजें हैं।" जब उन्होंने ये शब्द कहे तो, मेरी सभी चिन्ताएँ दूर हो गईं।

• • •

न्यूयार्क में प्रभुपाद श्रीमद्भागवत पर बहुत गम्भीरता और प्रामाणिकता के साथ व्याख्यान देते रहे। वे कृष्णभावनामृत आन्दोलन के प्रति समर्पित होकर कृष्ण को समर्पण होने पर बल देते थे। भागवत पर व्याख्यान देने वाले अन्य लोगों से प्रभुपाद भिन्न थे। वे एक आन्दोलन, एक संघ दे सके थे और एक जीवन-पद्धति, जो पूर्णत: कृष्णभावनाभावित थी और जो किसी भी रुचि रखने वाले व्यक्ति को भगवान् की प्रेमाभक्ति में व्यावहारिक प्रवेश दिला सकती थी।

किसी ने पूछा कि जो व्यक्ति बहुत सारे पाप करता रहा है, वह अपने कर्म से मुक्ति कैसे पा सकता है, और प्रभुपाद ने इसका बड़ा सरल उत्तर दिया, "आइये, और हमारे साथ रहिए। बस। क्या यह बहुत कठिन है? हमारे विद्यार्थी हमारे साथ रह रहे हैं। आप केवल आइये और हमारे साथ रहिए और आप सभी कर्मों से मुक्त हो जायेंगे। क्या यह कठिन है? तो इसे कीजिए। हम आपको भोजन देंगे, हम आपको आवास देंगे, हम आपको अच्छा दर्शन देंगे। यदि आप ब्याह करना चाहें, तो हम आपको अच्छी पत्नी देंगे। आप और अधिक क्या चाहते हैं? बस।"

अपने व्याख्यानों में प्रभुपाद इसी एक बात पर बल देते थे: यदि आध्यात्मिक उपलब्धि चाहने वाला कोई व्यक्ति इस्कान में रहकर सेवा करता है, तो उसे भौतिक उपलब्धियाँ भी मिलेंगी।

"कृष्णभावनाभावित ये लड़के और लड़कियाँ—साठ केन्द्रों में—अच्छे मकानों में रह रहे हैं। वे सबसे अच्छा खाना खा रहे हैं। वे सर्वोत्तम भावना में वास करते हैं। उनके लिए सर्वोत्तम आशा है। हर चीज उनके लिए सर्वोत्तम है। उनका शारीरिक रूप-रंग सब से अच्छा है। आप इससे अधिक भौतिक आनन्द क्या चाहते हैं? उनके पास पत्नी, बच्चे,

आनन्द, आवास—हर चीज है। अतः कृष्णभावनाभावित व्यक्ति के लिए भौतिक सुख कुछ चीज नहीं है। भौतिक सुख उनके चरणों पर गिरकर कहेगा, "कृपया मुझे अपनाइए, कृपया मुझे अपनाइए।" भौतिक सुख को माँगने की जरूरत नहीं है। केवल स्थिर हो जाइए और कृष्ण से कहिए, 'कृपा करके मुझे अपनी सेवा में लगाइए।' तब आपको स्वतः संतोष मिलेगा। भौतिक सुख के लिए चिन्ता न करें।"

नन्दकिशोर ने पूछा, "एक सड़क के आदमी को यदि हम एक रसगुल्ला या कुछ प्रसाद दें, तो क्या होगा?"

प्रभुपाद : "तो अच्छा होगा, सिर्फ अच्छा। (भक्त हँसने लगे।) उसने अपने जीवन में ऐसी मिठाई नहीं खाई होगी। इसलिए आप उसे रसगुल्ला दीजिए और उसे खाकर एक दिन वह आपके मन्दिर में आयेगा और आपका बन जायेगा। इसलिए सब अच्छा ही है। अतः आप रसगुल्ला बाँटते जाइए। आपका दर्शन अच्छा है। आपका प्रसाद अच्छा है। आप अच्छे हैं। आपके कृष्ण अच्छे हैं। सारी प्रक्रिया अच्छी है। कृष्ण सब कुछ अच्छा करते हैं? इसे से कौन इनकार कर सकता है?"

कीर्तनानन्द महाराज : "प्रभुपाद अच्छे हैं।"

• • •

जब प्रभुपाद न्यूयार्क में थे और कुछ दिनों में लंदन के लिए प्रस्थान की तैयारी में थे, तो उनके सचिव ने चर्चा की कि संयुक्त राज्य में अब भी बहुत-से ऐसे केन्द्र थे, जो उनकी अगवानी के लिए एक-दूसरे से होड़ लगा रहे थे। प्रभुपाद ने प्रसंगतः टिप्पणी की कि यदि कोई केन्द्र व्याख्यान के लिए अच्छा कार्यक्रम बना सके और उनके यात्रा-व्यय के अतिरिक्त एक हजार डालर दे सके, तो लंदन के लिए प्रस्थान करने के पूर्व वे उस केन्द्र में जा सकते थे।

यह सुनकर गेंसविले, फ्लोरिडा के भक्तों ने प्रभुपाद की इस दिव्य चुनौती को स्वीकार करने का निश्चय किया। मन्दिर के अध्यक्ष हृदयानंद ने एक अदीक्षित भक्त डैविड लिबरमैन को यह कार्य सौंपा कि वह फ्लोरिडा विश्वविद्यालय में कोई ऐसा व्यक्ति ढूँढ निकाले, जो एक हजार डालर देने को तैयार हो, जिससे प्रभुपाद आयें और भाषण दें। डैविड हर एक छात्र-संगठन में गया और अन्त में उसे एक दाता मिल ही गया।

प्रभुपाद जाने को सहमत हो गये, यद्यपि उनके सचिव ने उन्हें सूचित किया कि वायुयान अटलांटा में दो घंटे से अधिक रुकेगा और तब जैकसनविले के लिए चलेगा, जहाँ से गेंसविले मोटरकार से डेढ़ घंटे की दूरी पर था।

• • •

अटलांटा
जुलाई २९, १९७१

अटलांटा हवाई अड्डे पर वायुयान के दो घंटे रुकने पर हाल में स्थापित अटलांटा मन्दिर के दस निवासियों ने प्रभुपाद के स्वागत की व्यवस्था की। उन्होंने बड़े पैमाने पर भोजन तैयार कराया और ईस्टर्न एयर लाइंस का वी.आई.पी. प्रतीक्षालय फलों, फूलों और मालाओं से सजाया।

बिल ओगले : *यद्यापि श्रील प्रभुपाद विशालकाय नहीं थे, तो भी उतरते ही उन्होंने पूरे अटलांटा हवाई अड्डे की चेतना पर अधिकार कर लिया। जब वे चल रहे थे, तो हर एक उन्हें देख रहा था। उनका सिर ऊँचा उठा था, उनके हाथ की छड़ी उनके हर कदम के साथ सुन्दरता से गतिशील थी। यह हवाई अड्डा देश के सबसे व्यस्त हवाई अड्डों में से है, पर हर एक जिसकी दृष्टि प्रभुपाद पर पड़ी, उनको विस्मय से देख रहा था। हवाई अड्डे के अधिकारी प्रभुपाद के लिए स्वयं मार्ग प्रशस्त करने में लग गये। किन्तु जो चीज इससे अधिक विस्मयकारी थी, वह यह थी कि प्रभुपाद हम जैसे नगण्य शिष्यों के प्रति भी अत्यन्त विनम्र थे।*

अपने शिष्यों और लगभग बीस भारतीय अतिथियों के साथ प्रभुपाद वी.आई.पी प्रतीक्षा-कक्ष में प्रविष्ट हुए। संगमरमर की मेज पर स्थापित एक सुवाह्य व्यास-आसन को देखकर प्रभुपाद ने उस पर बैठने से इनकार कर दिया; वह स्थिर नहीं लगता था। किन्तु भक्तों ने उन्हें विश्वास दिलाया कि आसन मजबूत था, इसलिए प्रभुपाद उस पर चढ़े और बैठ गये और वे कीर्तन कराने लगे। पन्द्रह मिनिट तक बोलने के बाद प्रभुपाद ने अपना व्याख्यान समाप्त किया।

"यह कीर्तन केवल भावुकता-वश नहीं है, यह सब से ठोस दर्शन पर आधारित है। इसका आधार वैदिक शास्त्र है। हमारे पास कितनी पुस्तकें हैं, और आप उन्हें हमारे पुस्तक-भंडार से खरीद सकते हैं। पुस्तक-भंडार कहाँ है ?"

देर तक मौन छाया रहा। भक्तों को फल, फूल, कुर्सी, भोजन और भारतीयों को निमंत्रण—यह सब याद था, किन्तु वे प्रभुपाद की पुस्तकें भूल गये थे। प्रभुपाद उत्तर की प्रतीक्षा करते रहे; अन्त में उनके वरिष्ठ शिष्य, जनमेजय ने उत्तर दिया, "प्रभुपाद, आमतौर से हम एक पुस्तक-भंडार रखते हैं।"

प्रभुपाद के मुख से केवल 'हुम्म' निकला। फिर देर तक मौन छाये रहा। "तो" प्रभुपाद ने श्रोताओं की ओर देखते हुए कहा, "कोई प्रश्न है ?"

प्रभुपाद भारतीयों से बातचीत करते रहे। उन्होंने उनके नाम पूछे और यह कि वे भारत के किस स्थान से आये थे। अधिकतर भारतीय जवान थे और परिवार वाले थे। उन्होंने

प्रभुपाद के साथ दादा या पूज्य स्वामी जैसा सम्मानजनक व्यवहार किया। लगभग पैंतीस वर्षीय एक भारतीय ने बताया कि वह जीव-विज्ञान में पीएच.डी. कर रहा था।

"ओह, जीव-विज्ञान," प्रभुपाद ने कहा, "हुम्म, बेचारे मेंढ़क" प्रतीक्षा-कक्ष में बैठे सभी लोग हँस पड़े, सिवाय उस जीव-विज्ञानी के।

"नहीं, नहीं," जीव-विज्ञानी ने संकोच में पड़कर प्रतिवाद किया, "यह मेंढ़क बेचारे क्यों?"

"क्योंकि तुम उन्हें मार रहे हो?" प्रभुपाद ने कहा।

"लेकिन यह ज्ञान की प्रगति के लिए है," जीव-विज्ञानी ने कहा, "इसलिए यह जरूरी है। यह ज्ञान की प्रगति के लिए है।"

"अच्छा ठीक है," प्रभुपाद बोले, "यदि मैं अब कहूँ, तो क्या ज्ञान की प्रगति के लिए तुम अपना शरीर दोगे?" कमरे का हर व्यक्ति हँसने लगा।

"हाँ, हाँ, मैं दे दूँगा," उस आदमी ने उत्तर दिया। किन्तु जितना ही वह प्रतिवाद करता गया और दुहराता गया कि 'हाँ, मैं दे दूँगा," उतना ही वह उपहास्य बनता गया और लोग उतनी ही अधिक तेजी से हँसते रहे।

"जीव की कितनी किस्में हैं?" प्रभुपाद ने पूछा।

"पाँच करोड़" जीव-विज्ञानी ने उत्तर दिया।

"ओह?" प्रभुपाद बोले, "क्या तुम ने सभी को देखा है?"

"नहीं।"

"तुमने कितनों को देखा है?"

"शायद पाँच हजार को।"

"और तुम गलत कह रहे हो," प्रभुपाद ने कहा। जीव की ८,४००,००० किस्में हैं। यह वैज्ञानिक जानकारी हमें वेदों से मिलती है।

• • •

बिल ओगले : *प्रभुपाद के प्रसाद ग्रहण कर लेने पर हमने उनके लिए एक नाटक प्रस्तुत किया। नाटक का नाम 'ब्राह्मण और मोची' था। मैंने विष्णु का अभिनय किया। वह बड़ा कठिन था। मुझे विष्णु बनना था और मेरी पत्नी को लक्ष्मी बनना था। विष्णु के रूप में मैं लेटा था और मेरी पत्नी मेरे पैर दबा रही थी। प्रभुपाद मेरी ओर देख रहे थे और मैंने सोचा कि उनके मन में जरूर आ रहा होगा कि, "विष्णु बनने वाला यह बदमाश कौन है?" मुझे लगा कि, "यह बहुत अच्छा नहीं है, मुझे यह नहीं करना चाहिए था।" प्रभुपाद के सामने इस रूप में आने पर मुझे बहुत संकोच हो रहा था।*

जयसेन नारद मुनि का अभिनय कर रहा था। और अभिनय के बीच उसने सैकड़ों बार प्रणाम किया। चूँकि प्रभुपाद वहाँ मौजूद थे, इसलिए जयसेन हर एक व्यक्ति और वस्तु को प्रणाम कर रहा था। यद्यपि वह नारद मुनि बना था, फिर भी उसने मोची को भी प्रणाम किया। इस पर कुछ भारतीय बोल पड़े। उन्हें आश्चर्य हो रहा था कि नारद मुनि जैसा महान् संत एक मोची को प्रणाम करे, जो साधारणतः बहुत नीच जाति का व्यक्ति होता है।

तो इस स्थान पर प्रभुपाद ने दखल दिया और वे व्याख्या करने लगे, "सचमुच" उन्होंने कहा, "यह उचित है कि नारद मुनि ने एक मोची को प्रणाम किया है, क्योंकि मोची वैष्णव है। कोई वैष्णव ब्राह्मण से भी अधिक प्रणम्य है।" वे नाटक का वर्णन करते गये। उन्होंने कहानी बताई और हम अभिनय करते रहे। यह बहुत आनन्ददायक था।

जिस समय प्रभुपाद जैक्सनविले की उड़ान पकड़ने के लिए विश्राम-कक्ष से चल रहे थे, उसी समय व्हील कुर्सी में बैठी एक महिला, जो अटलांटा के एक भक्त की माँ थी, आई और प्रभुपाद के चरणों पर गिर पड़ी। आँखों में आँसू भरकर वह चिल्लाने लगी, "मैं कैंसर से मर रही हूँ। मुझे बचाइए, मुझे बचाइए।" श्रील प्रभुपाद झुके और उन्होंने अपना हाथ उसके सिर पर रखा, "ठीक है," उन्होंने उसे संतोष देते हुए कहा, "ठीक है।"

जब लाल गुलाब और मैगनोलिया वृक्ष के फूलों की मालाएँ पहने हुए प्रभुपाद गलियारे से होकर अपने वायुयान की तरफ बढ़ रहे थे, तो भक्तों को वे एक राजा की भाँति बहुत तेजस्वी लगे। उनसे स्वर्णिम आभा प्रकट हो रही थी, वे शक्तिशाली लग रहे थे, फिर भी वे विनम्र थे। भक्तों को आध्यात्मिक शक्ति की अनुभूति हुई और उन्होंने उनकी शिक्षाओं को पालन करने का प्रण किया। भक्तों के लिए प्रभुपाद की आखिरी झलक वह थी, जब वे जैक्सन विले ले जाने वाले छोटे-से हवाई जहाज में बैठने के लिए हवाई अड्डे के मैदान में चल रहे थे। उनकी केसरिया रेशमी धोती और कुर्ता मंद वायु में उड़ रहे थे, भक्तों की ओर मुड़कर प्रभुपाद ने हाथ हिलाया।

• • •

गेंसविले
जुलाई २९, १९७१

प्रभुपाद ने पूछा कि मोटरकार कितनी तेजी से जा रही थी और उन लोगों को गेंसविले पहुँचने में कितना समय लगेगा। ड्राइवर ने बताया कि मोटरकार पैंसठ मील प्रति घंटे की रफ्तार से जा रही थी और गेंसविले पहुँचने में डेढ़ घंटा लगेगा। प्रभुपाद राजमार्ग के दृश्य देखते रहे—चीड़ के जंगल, दलदल, भाँति-भांति के विचित्र पक्षी, कभी कभी अमरीकी जन्तु आर्मेडिलो जो राजमार्ग तक पहुँच जाता था। सड़क के साथ-साथ बहने वाली नहरों

में कमल और कुमुदिनी के फूल जंगली स्तर पर खिले थे और निर्मल धूप से स्वच्छ हवा गरम हो रही थी।

गेंसविले प्रभुपाद के लिए एक अतिरिक्त यात्रा थी, धर्मोपदेश के लिए वह एक विशेष दिन था। उन्होंने अपने सचिव, श्यामसुन्दर को न्यूयार्क में छोड़ दिया था और अपने साथ वे केवल अपने सेवक अरविन्द को लाए थे। वे केवल एक दिन के लिए आये थे, एक और नगर में भगवान् चैतन्य का अनुग्रह पहुँचाने के लिए। जब भक्तों ने हवाई अड्डे पर उनका स्वागत किया था, उस समय वे बहुत गम्भीर लग रहे थे। लेकिन भक्तों को देख लेने के बाद वे आश्चर्यजनक रीति से मुसकराए थे और तब हृदयानन्द की ओर मुड़ते हुए उन्होंने पूछा था, "किस मार्ग से जाना है?" वे एक दिव्य योद्धा की भाँति थे, जो युद्ध का मार्ग जानना चाहता था।

• • •

प्रभुपाद पुष्प-संकुलित मार्ग से मन्दिर में प्रविष्ट हुए, जो फ्लोरिडा विश्वविद्यालय के परिसर में एक किराए के मकान में स्थित था। मन्दिर-कक्ष में वे एक मिनट तक भगवान् चैतन्य और उनके पार्षदों के एक अपरिष्कृत किन्तु निष्ठापूर्वक बनाया गये चित्र को देखते हुए खड़े रहे। हृदयानन्द ने प्रभुपाद से पूछा कि क्या वे विश्राम करना चाहते थे और उन्होंने सिर हिलाकर 'हाँ' कहा। भक्त कीर्तन में लगे रहे और प्रभुपाद कमरे में विश्राम करने चले गये। बाद में वे छोटे-से मन्दिर-कक्ष में आये और विशाल नीले मखमली व्यास-आसन पर बैठ गये। प्रभुपाद के गेंसविले, मियामी, तलहासी और न्यू आरलियन्स के शिष्यों के अतिरिक्त विश्वविद्यालय के बहुत-से छात्र और अन्य अतिथि भी उपस्थित थे।

"इतने अधिक युवा लड़कों और लड़कियों को यहाँ देखना कितना अच्छा लग रहा है," श्रील प्रभुपाद ने कहना आरम्भ किया, "संसार के इस सुदूर कोने में, भगवान् चैतन्य के जन्म-स्थान से इतनी दूर।"

प्रभुपाद ने भगवान् के पवित्र नाम के जपने के संरक्षणकारी गुणों का वर्णन किया। उन्होंने बताया कि उनका एक शिष्य वहीं पर उपस्थित था, जब उसकी माँ मर रही थी। "चूँकि वह कृष्ण और हरे कृष्ण के बारे में उसे बताया करता था, इसलिए उसने अपने अन्तिम शब्दों में अपने पुत्र से कहा, "तुम्हारे कृष्ण कहाँ हैं? क्या वे इस समय यहाँ है? और तब वह मर गई।" पवित्र नाम का उच्चारण करने और कृष्ण के विषय में सोचने के कारण, प्रभुपाद ने कहा, वह आध्यात्मिक लोक में जायेगी।

जब प्रभुपाद अपना व्याख्यान समाप्त कर चुके, तो विश्वविद्यालय के एक समाचार-पत्र की एक महिला संवाददाता ने हाथ उठाया, "मैं देख रही हूँ कि यहाँ लगभग सभी युवा

लोग उपस्थित हैं। ऐसा क्यों है?"

प्रभुपाद ने एक प्रश्न के साथ उत्तर दिया, "विश्वविद्यालय में इतने युवा लोग क्यों हैं?"

महिला ने एक मिनट सोचा, "अच्छा... मेरा अनुमान है कि शिक्षा के लिए यही अवस्था है।"

"हाँ," प्रभुपाद ने कहा, "तो यही अवस्था कृष्णभावनामृत के लिए है। तुम बुड्ढे कुत्ते को नई चालें नहीं सिखा सकती।"

• • •

जिस कार्यक्रम के लिए प्रभुपाद आये थे, और जिसके लिए फ्लोरिडा विश्वविद्यालय एक हजार डालर दे रहा था, वह 'प्लाजा आफ अमेरिकाज' के परिसर में उस दिन तीसरे पहर होना था। जब प्रभुपाद पहुँचे, तो वहाँ अस्थायी रंगमंच के समीप कई सौ छात्र एकत्रित हो चुके थे, कुछ घास पर बैठे थे, कुछ महकते हुए मैगनोलिया वृक्षों के नीचे प्रतीक्षा कर रहे थे। आकाश बादलों से आच्छादित था और वर्षा होने की आशंका थी।

छात्रों की संख्या में वृद्धि होती रही और वह पाँच सौ तक पहुँच गई। तब, ज्योंही प्रभुपाद बोलने को उठे कि हल्की फुहार शुरू हो गई और हृदयानन्द प्रभुपाद के ऊपर छाता लगाने के लिए रंगमंच पर चढ़ गया।

अपने व्यास-आसन पर बैठे हुए प्रभुपाद ने माइक्रोफोन में धीरे से कहा, "कोई सिगरेट पी रहा है।" और छात्रों ने शालीनतापूर्वक अपने सिगरेट बुझा दिए। प्रभुपाद ने ज्योंही अपना व्याख्यान आरम्भ किया कि एक कुत्ता भौंकने लगा। प्रभुपाद रुक गये, "यह कुत्ता कौन है?" उन्होंने पूछा। जब कुत्ते का भौंकना जारी रहा, तो श्रील प्रभुपाद बोले, "वह भी बोलना चाहता है।" अन्त में भौंकना बन्द हो गया, और वर्षा भी बन्द हो गई। किन्तु हृदयानन्द प्रभुपाद के सिर के ऊपर छाता लगाए रहा।

• • •

जब प्रभुपाद कार से मन्दिर वापस जा रहे थे, तो उन्होंने अपने व्याख्यान का टेप-रेकार्ड बजाने को कहा। जब व्याख्यान के आरम्भ में उन्होंने कुत्ते को भौंकते हुए सुना तो वे हँसने लगे।

"प्रभुपाद," हृदयानन्द ने कहा, "आपका व्याख्यान आश्चर्यजनक था। उसे हर एक ने पसन्द किया। छात्रों ने उसे पसन्द किया, भक्तों ने उसे पसन्द किया और प्राचार्यों ने उसे पसन्द किया।"

"अच्छा," प्रभुपाद बोले, "हरे कृष्ण।"

• • •

प्रभुपाद के धर्मोपदेश का दिन अभी समाप्त नहीं हुआ था। उस शाम को टी.वी. पर उनकी एक भेंट-वार्ता प्रसारित होनी थी।

भेंटकर्ता ने तैयारी के रूप में कुछ अध्ययन कर रखा था और उसने प्रभुपाद का परिचय पहले यह बताकर दिया कि वैदिक शास्त्र के अनुसार कृष्ण कौन थे और भगवान् चैतन्य की गुरु-शिष्य परम्परा में श्रील प्रभुपाद का क्या स्थान था। जब भेंटकर्ता ने प्रभुपाद से परिचयात्मक वक्तव्य के लिए प्रार्थना की तो प्रभुपाद ने कहा, "कृष्णभावनामृत आन्दोलन लोगों में इस मूल भावना को जगाने का प्रयत्न कर रहा है कि हम सब कृष्ण के अभिन्न अंग हैं।"

जब भेंटकर्ता ने प्रभुपाद से पूछा, "आपके आध्यात्मिक गुरु कौन हैं?" तो प्रभुपाद ने विनयपूर्वक अपना सिर झुका दिया और अपने गुरु महाराज का पूरा नाम बताया, "ॐ विष्णुपाद परमहंस परिव्राजकाचार्य भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी महाराज प्रभुपाद।"

किन्तु भेंटकर्ता विवाद पर तुला हुआ लगता था। "महोदय, क्या मैं पूछ सकता हूँ कि आपने यह क्यों सोचा और ठीक इस समय भी आप यह क्यों सोच रहे हैं कि भगवान् के जिस प्रेम की आप शिक्षा दे रहे हैं, वह भगवान् के प्रेम की उन शिक्षाओं से भिन्न और शायद अच्छी है, जो इस देश में दी जा रही थीं और संसार के अन्य देशों में शताब्दियों से दी जाती रही है?"

श्रील प्रभुपाद: "यह शिक्षा सबसे अधिक प्रमाणित है। यह एक तथ्य है। हम भगवान् चैतन्य के चरण-चिह्नों पर चल रहे हैं। वैदिक धर्म के प्रमाण के आधार पर चैतन्य महाप्रभु स्वयं कृष्ण माने जाते हैं। उदाहरण के लिए, आप इस प्रतिष्ठान के विशेषज्ञ हैं। यदि कोई आपके निर्देशन में कुछ कर रहा है और आप उसे व्यक्तिगत रूप से कुछ सिखाते हैं कि 'ऐसा करो' तो वह बहुत प्रामाणिक होगा। इसलिए जब भगवान् चैतन्य ने भगवद्भावना की शिक्षा दी, तो वह शिक्षा स्वयं भगवान् दे रहे थे।"

प्रभुपाद ने निश्चयात्मक ढंग से उत्तर दिया, उस साम्प्रदायिक विग्रह से बचते हुए, जिसे भेंटकर्ता उभारना चाहता था। इतने पर भी भेंटकर्ता ने बार-बार उन्हें विवाद में फँसाना चाहा। ऐसा लगता था कि वह चाहता था कि प्रभुपाद अहंकारी, सम्प्रदायवादी और अमेरिका-विरोधी रूप में दिखाई दें। किन्तु प्रभुपाद आग्रहपूर्वक कहते रहे कि वे किसी अन्य धर्म के विरोधी नहीं थे और संसार का कोई भी व्यक्ति अपने धर्म के अनुसार भगवान् के नाम का कीर्तन कर सकता था।

भेंटकर्ता: "किन्तु आपके यहाँ आने के पहले दुनिया के इस भाग में भगवान् की

मान्यता जिस रूप में रही है, उससे आपके मन में कुछ असंतोष रहा होगा। अन्यथा, आपके यहाँ आने का कोई मतलब न होता।"

श्रील प्रभुपाद : "केवल दुनिया के इस भाग से मतलब नहीं है। वास्तव में दुनिया के हर भाग में भगवान् में रुचि बहुत थोड़ी है। उनकी अधिक रुचि कुत्ते में है।"

प्रभुपाद के उत्तर बहुत शक्तिशाली थे; दार्शनिक दृष्टि से वे बहुत शक्तिशाली थे। भेंटकर्ता ने अपनी समस्त बुद्धि लगाकर कुछ दोष निकालने का फिर प्रयत्न किया।

भेंटकर्ता : महोदय, मुझे ऐसा लगता है कि जैसाकि आपकी रचनाओं में व्याख्या की गई है, व्यक्ति और भगवान् के बीच के सम्बन्ध पर बहुत अधिक बल है।

श्रील प्रभुपाद : "हाँ, यह सर्वत्र मिलता है।"

भेंटकर्ता : "हाँ, किन्तु आप उस सम्बन्ध पर, व्यक्ति और व्यक्ति के बीच के सम्बन्ध की तुलना में अधिक बल देते हैं। क्या मैं ठीक हूँ ?"

श्रील प्रभुपाद : "सबसे पहले हमें भगवान् के साथ अपने टूटे हुए सम्बन्ध को जोड़ना है। तब हम समझ सकते हैं कि एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति के साथ क्या सम्बन्ध है। यदि केन्द्रीय बिन्दु ही गायब है, तो वस्तुतः कोई सम्बन्ध नहीं होगा। आप अमेरिकन हैं और एक दूसरा व्यक्ति भी अमेरिकन है और आप दोनों अमेरिकन राष्ट्रीयता अनुभव करते हैं, क्योंकि केन्द्र अमेरिका है। इसलिए जब तक आप भगवान् को नहीं समझते, तब तक आप यह नहीं समझ सकते कि मैं कौन हूँ और न मैं समझ सकता हूँ कि आप कौन हैं।"

भेंटकर्ता : मेरे विचार से संसार के इस भाग में, पाश्चात्य जगत में हम धर्म के उन पक्षों पर बल देते हैं, जो हमें एक-दूसरे के साथ व्यवहार करना सिखाते हैं—अर्थात् धर्म के नैतिक पक्ष पर। कृष्णभावनामृत संघ में...

श्रील प्रभुपाद : हमारा इससे मतलब नहीं है कि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के साथ कैसा व्यवहार करता है।

भेंटकर्ता : "क्या यह आपके कृष्णभावनामृत आन्दोलन का अंग नहीं है ?"

श्रील प्रभुपाद : "नहीं, यह महत्त्वपूर्ण नहीं है। क्योंकि हम जानते हैं कि कोई मनुष्य ज्योंही यह जान जाता है कि भगवान् के प्रति कैसा व्यवहार करना चाहिए, त्योंही उसे दूसरे मनुष्यों के साथ व्यवहार करना अपने आप आ जाता है।

भेंटकर्ता : "किन्तु उदाहरण के लिए हम ईसाई धर्म लें। आप 'दस आदेशों' (टेन कमांडमेंट्स) को जानते हैं ? इन दस आदेशों में एक मनुष्य के दूसरे मनुष्य के साथ व्यवहार पर गहरा बल दिया गया है। 'तू चोरी नहीं करेगा,' 'तू हत्या नहीं करेगा।' आप इन बातों को जानते हैं।"

श्रील प्रभुपाद : "किन्तु मेरा कहना है कि ईसा मसीह ने कभी नहीं कहा और उनका

आशय कभी नहीं था कि 'तू हत्या नहीं करेगा' कथन का तात्पर्य केवल मानव-जाति से था। इसका साक्ष्य कहाँ है? ईसा मसीह ने कभी नहीं कहा कि 'तू हत्या नहीं करेगा' यह केवल मानव-जाति को निर्दिष्ट करता है कि तू किसी पशु की हत्या नहीं करेगा।"

भेंटकर्ता : "किसी जीव की?"

श्रील प्रभुपाद : "किसी भी जीव की। धर्म यही है।"

भेंटकर्ता : 'इसकी व्याख्या इस तरह कभी नहीं की गई।"

श्रील प्रभुपाद : "आपने इस की व्याख्या भिन्न ढंग से की है, किन्तु ईसा मसीह ने कहा कि 'तू हत्या नहीं करेगा।' उन्होंने यह कभी नहीं कहा कि, "तू मनुष्य जाति में से किसी को नहीं मारेगा।" आप इसकी व्याख्या उस तरह क्यों करते हैं?"

प्रभुपाद ने टी.वी. भेंटकर्ता को वही चीज प्रदान की जिसे वह चाहता था, अर्थात् विवाद; किन्तु चूँकि वह विवाद उसके लिए मनोवांछित नहीं हुआ, इसलिए उसने उसे तुरन्त छोड़ दिया। उसके स्थान पर उसने प्रभुपाद से पूछा कि किसी मनुष्य के व्यवहार से कैसे जाना जा सकता था कि वह कृष्णभावनामृत का सच्चा अनुयायी है।

"वह पूर्णतया भला आदमी होगा," प्रभुपाद ने कहा "बस। इसीलिए मैं अपने शिष्यों को मांस खाने से मना करता हूँ।"

भेंटकर्ता : "मांस खाने से?"

श्रील प्रभुपाद : "हाँ। और इसीलिए मैं अवैध यौन जीवन का निषेध करता हूँ। इसीलिए मैं मादक द्रव्य-सेवन का निषेध करता हूँ। वे धूम्रपान भी नहीं करते, अन्य मादक वस्तुओं का कहना ही क्या?"

जब प्रभुपाद ने कहा कि जो कोई इन चार नियमों का पालन करता है, वह पूर्णतया भला मानस बनता है, तो भेंटकर्ता ने पूछा कि उनके धर्म में स्त्रियों के लिए कोई स्थान था। प्रभुपाद ने उत्तर दिया स्त्रियों और पुरुषों दोनों के अधिकार समान थे और दोनों एक जैसे सिद्धान्त पर चलते थे। जब भेंटकर्ता ने पूछा कि प्रभुपाद हतोत्साहित थे या प्रोत्साहित, तो प्रभुपाद ने कहा कि वे प्रोत्साहित थे, क्योंकि बहुत सारे भक्त उनके आन्दोलन में शामिल हो रहे थे। भेंटकर्ता को सन्देह था कि बहुत-से लोग आन्दोलन में शामिल हो रहे थे, क्योंकि बीस करोड़ अमेरिकनों में से टी.वी. केन्द्र में केवल दो दर्जन भक्त उपस्थित थे। "जब आप हीरा बेचते हैं," प्रभुपाद ने कहा, "तो आप आशा नहीं करते कि हर एक उसे खरीदेगा।"

अन्तिम प्रश्न के रूप में भेंटकर्ता ने पूछा कि क्या प्रभुपाद को अमेरीकी समाज के बारे में कोई बड़ी शिकायत थी।

श्रील प्रभुपाद : "मुझे कोई शिकायत नहीं है। ये लड़के और लड़कियाँ बहुत अच्छे

हैं। वरन् मुझे यह देखकर उत्साह होता है कि ये लड़के और लड़कियाँ अच्छी चीज के लिए तड़प रहे हैं। वे निराश हैं। इसलिए, चूँकि अब उन्हें सबसे बढ़िया चीज मिल गई है, वे हमारे पास आ रहे हैं।"

भेंटकर्ता ने श्रील प्रभुपाद और उनके अनुयायियों से हरे कृष्ण कीर्तन करने के लिए कहा, और आधे मिनट के अन्दर उनका टी.वी. कार्यक्रम समाप्त हो गया। स्टूडियो का उष्ण प्रकाश जाता रहा और इंजिनियर आपस में बातें करने लगे। भेंटकर्ता ने नम्रतापूर्वक श्रील प्रभुपाद से विदाई ली—उसका इरादा भेंटवार्ता जारी रखने का नहीं था—किन्तु प्रभुपाद धर्मोपदेश करते रहे। कैमरा रहे या न रहे, उनके लिए कोई अन्तर नहीं पड़ता था। उन्होंने भेंटकर्ता को केवल टी.वी. के एक व्यक्ति के रूप में ही नहीं देखा, वरन् उस व्यक्ति के रूप में, जिसे कृष्ण की कृपा चाहिए थी।

भेंटवार्ता के लिए दोनों एक-दूसरे के बहुत पास बैठे हुए थे और अब प्रभुपाद भेंटकर्ता की ओर झुके और बोले, "मैं आपसे एक प्रश्न पूछता हूँ। यदि आपको कोई रोग है और उसे आप अच्छा करना चाहते हैं, तो उसका सबसे अच्छा तरीका क्या है? एक मित्र से पूछकर, या किसी डॉक्टर के पास जाकर और पूछकर, कि इस रोग को कैसे अच्छा किया जाये? क्या आप किसी मित्र के पास जायेंगे?"

उस व्यक्ति ने उत्तर दिया, "हाँ।" प्रभुपाद ने सिर हिलाया, "आप किसी मित्र के पास जायेंगे?" उस आदमी ने फिर कहा, "हाँ।"

भेंटकर्ता ध्यान नहीं दे रहा था, इसलिए प्रभुपाद ने धैर्यपूर्वक उदाहरण को दुहराया, "समझने की कोशिश कीजिए," उन्होंने कहा, "यदि आपको कोई रोग है, तो क्या आप एक डॉक्टर के पास जायेंगे या एक मित्र के पास?" वह व्यक्ति प्रभुपाद का आशय नहीं समझ सका, इसलिए प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "नहीं, आप एक मित्र के पास नहीं जायेंगे। आप किसी डॉक्टर के पास जायेंगे—जो उपचार जानता है। वह डॉक्टर आध्यात्मिक गुरु है।" वे थोड़ी देर और बात करते रहे, और अन्त में प्रभुपाद और भक्तों ने विदा ली।

• • •

करीब आधी रात हो रही थी, और प्रभुपाद अपने कमरे में गये। जब वे गेंसविले में पहले पहुँचे, तो वे पाँच योग्य अभ्यर्थियों को दीक्षा देने को राजी हुए थे और उन्होंने उनकी जप-मालाएँ भी ले ली थीं। किन्तु अब दिन बीत चुका था, दीक्षा नहीं हो सकती थी, और प्रभुपाद के पास पाँचों जप-मालाएँ अब भी थीं। जोसेफ और साम जो न्यू आरलियंस से आये थे, और डैविड लिबरमैन और उसकी पत्नी, एड्रीन और एक गेंसविले का गेरी नामक लड़का—सब बड़ी चिन्ता में थे। वे रुके हुए थे और आपस में बातें कर

रहे थे कि सवेरे प्रस्थान करने के पूर्व श्रील प्रभुपाद दीक्षा-समारोह करेंगे या नहीं।

अरविन्द ने उन लोगों को बताया कि सवेरे किसी समारोह के लिए समय नहीं रहेगा, लेकिन वह श्रील प्रभुपाद से पूछेगा कि उन्हें अपनी जप-मालाएँ कब वापस मिलेंगी। भक्तों को आपस में श्रील प्रभुपाद के बारे में बातें करते छोड़कर अरविंद प्रभुपाद के कमरे में गया। जब वह लौटा, तो उसने इस घोषणा से सब को आश्चर्य में डाल दिया कि, "प्रभुपाद तुम सब की मालाएँ तुम्हें अभी वापस करने जा रहे हैं। वे अपने कमरे में तुम्हें दीक्षा देने जा रहे हैं।" भक्त उमंग में भरकर शीघ्रतापूर्वक प्रभुपाद के कमरे में गये।

प्रभुपाद अपने पलंग पर बैठ गये। वे कोई कमीज नहीं पहने हुए थे, उन्होंने केवल धोती पहन रखी थी, जिसे जांघ तक खिसकाकर लुंगी या गमछे की तरह उन्होंने अपने नीचे दबा लिया था। उनका शरीर सुडौल और आभामय था। भक्त उनके पलंग के इर्द-गिर्द फर्श पर बैठ गये। उनकी मालाएँ हाथ में लेकर प्रभुपाद जप करने लगे।

प्रभुपाद ने गेरी को उसकी माला दी, "तो अब तुम्हारा नाम धर्मदास है। इसका तात्पर्य है 'वह जो सभी धार्मिक नियमों का कड़ाई के साथ पालन करे।'"

धर्मदास : *मैं सचमुच बहुत घबराया हुआ था और वस्तुत: काँप रहा था, क्योंकि मुझे डर था कि श्रील प्रभुपाद के समक्ष मुझसे कोई गलती हो जायेगी। मैं इतना घबराया हुआ था कि सचमुच मुझे ठीक-ठीक सुनाई नहीं पड़ा। किन्तु मैं बहुत प्रसन्न था कि श्रील प्रभुपाद ने मुझे स्वीकार कर लिया था। निस्सन्देह, मैं जानता था कि अब कभी भी आन्दोलन छोड़ने का कोई प्रश्न ही नहीं था। मैं कभी छोड़ना भी नहीं चाहता था और अब तो सब कुछ औपचारिक हो गया। यदि पहले कभी मैंने सोचा भी हो, तो अब कोई प्रश्न ही नहीं था।*

तब न्यू आरलियंस के जोसेफ की बारी आई। "उसका नाम क्या है?" प्रभुपाद ने अरविन्द से पूछा। अरविन्द ने एक कागज से पढ़ा, "भागवत दास," प्रभुपाद मुसकराए और बोले, "ओह, भागवत दास। बहुत अच्छा। दो चीजे हैं। *भागवत* पुस्तक है— *श्रीमद्भागवत* और *भगवद्गीता*। और भागवत व्यक्ति है, जो इनकी शिक्षाओं का पालन पूर्णतया करता है। वह *भागवत* पुस्तक का सजीव साकार रूप है। और तुम भागवत दास हो। इसका तात्पर्य यह है कि तुम *भागवत* पुस्तक और *भागवत* व्यक्ति दोनों के सेवक हो।

भागवतदास : *मैं सदैव ऐसा नाम चाहता था जिसका अर्थ हो कि मैं गुरु का दास था। इसलिए जब मैंने यह नाम सुना, तो मैं बहुत प्रसन्न हुआ। प्रभुपाद मेरी माला मुझे देने लगे। लेकिन उन्होंने उसे वापस खींच लिया और पूछा, "चार विधि-विधान क्या हैं?" मैंने उन्हें बताया तो उन्होंने कहा, "बहुत अच्छा।"*

तो, वे मेरी माला मुझे फिर देने लगे, लेकिन उन्होंने उसे फिर खींच लिया। उन्होंने

पूछा, "तुम कितनी मालाओं का जप करते हो?" मुझे बहुत गर्व था, क्योंकि गत पाँच महीनों से मैं प्रतिदिन बीस मालाएं जप कर रहा था। इसलिए मैं सीधा तनकर बैठ गया और बोला, "श्रील प्रभुपाद, ऐसा माना जाता है कि जप सोलह मालाएं करना चाहिए। किन्तु मैं बीस मालाएं करता हूँ।"

श्रील प्रभुपाद ने मेरी ओर से मुख फेर लिया और कहा, "ठीक है।" यह उनके ऐसा कहने के समान था कि, "गर्व से फूलो मत।" तब वे मेरी ओर मुड़े और बोले, "तुम्हारी माला यह रही।"

डेव को उसकी माला देते हुए प्रभुपाद ने कहा, "तुम्हारा नाम अमरेन्द्र है, जिसका अर्थ है 'अमरों में सर्वश्रेष्ठ'। उन्होंने एड्रीन को 'गायत्री दासी' और साम को 'सुव्रत' नाम दिए।

जब सुव्रत खड़ा हुआ और प्रभुपाद ने देखा कि वह गले की माला नहीं पहने था, तो उन्होंने उसकी जप-माला रोक ली और कहा, "तुम्हारे पास गले की माला नहीं है?" "तुम्हारी गले की माला कहाँ है?" प्रभुपाद भागवत दास की ओर मुड़े "तुम्हारे पास भी गले की माला नहीं है?" भागवत ने समझा कि प्रभुपाद उसकी जप-माला वापस लेने जा रहे हैं, इसलिए उसने उसे पेट के पास छुपा लिया। तब प्रभुपाद कमरे के वरिष्ठ भक्तों की ओर मुड़े और उन्होंने आलोचना की, "क्या मामला है?" उन्होंने रुखाई से कहा, "तुम नायक हो और तुम इन चीजों को नहीं जानते? क्या तुम नहीं जानते कि दीक्षा के समय तुम्हें गले की माला पहननी चाहिए?"

प्रभुपाद के आक्रोश से वरिष्ठ भक्त डर गये। "हमें दुख है, प्रभुपाद," किसी एक ने कहा, "कल हवन के समय सब गले की मालाएँ धारण करके आयेंगे।"

"हाँ," प्रभुपाद ने कहा, "गले में माला पहने बिना तुम हवन नहीं कर सकते। उन्हें गले की माला जरूर पहननी चाहिए।"

यद्यपि आधी रात हो रही थी, तथापि प्रभुपाद ने पूछा कि क्या किसी भक्त को कोई प्रश्न पूछना था। भागवत दास ने अपना हाथ उठाया "क्या बात है कि हम लोग दिव्य मंच पर हैं, फिर भी कभी-कभी हम त्रिगुणात्मक प्रकृति से प्रभावित हो जाते हैं?"

"यह एक नाव पर होने के समान है।" प्रभुपाद ने उत्तर दिया। "यदि तुम नाव में हो तो मैं नहीं कह सकता कि तुम नाव में नहीं हो। क्या ऐसी बात नहीं है? तो तुम दिव्य नाव में हो, इसलिए दिव्य मंच पर हो। तुम नहीं कह सकते कि तुम नहीं हो। किन्तु लहरें आ रही हैं और नाव को आन्दोलित कर रही हैं।" प्रभुपाद ने हाथों से नाव के आन्दोलित होने जैसा संकेत किया। "इसी तरह भौतिक प्रकृति की लहरें आ रही हैं" उन्होंने कहना जारी रखा, "और वे नाव को आन्दोलित कर रही हैं। किन्तु जब तुम एक कुशल नाविक बन

जाओगे, तो बड़े से बड़े तूफान में भी तुम स्थिर रह सकोगे और नाव को आराम से निकाल ले जाओगे और वह आन्दोलित नहीं होगी।"

"अच्छा, तो कोई कुशल नाविक कैसे बनता है?" भागवत ने पूछा।

"तुम कुशल बनते हो," प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "उत्साही, निष्ठ, दृढ़ और धैर्यवान् बनकर।" भागवत का चिन्ताकुल चेहरा देखकर प्रभुपाद ने जोड़ दिया, "तुम्हें धैर्यवान होना चाहिए। समय पर हर चीज होगी।"

अपने पलंग पर धोती समेटकर अनौपचारिक रूप से बैठे हुए प्रभुपाद ने भागवत के प्रश्नों के उत्तर इस तरह दिए कि सभी भक्तों को पूरा संतोष हो गया।

प्रभुपाद के साथ होने से भक्तों को यों भी संतोष था, किन्तु उनके प्रश्नों के प्रभुपाद ने जो उत्तर दिए उनसे न केवल वे, वरन् सभी भक्त प्रोत्साहन ले सकते थे और संतोष पा सकते थे। वे दूसरों को बताएंगे, जो कुछ प्रभुपाद ने कहा था और हर एक प्रभुपाद की ये शिक्षाएँ याद रखना चाहेगा।

अमरेन्द्र के पास भी एक प्रश्न था। अमरेन्द्र बहुत दृढ़ और उत्तेजित था, और वैसी ही उसकी जिज्ञासा भी थी। भक्त बनने के पहले वह विश्वविद्यालय के क्रान्तिकारियों का नेता था। अब कृष्णभावनामृत के प्रसार में भी वह वही दृढ़ता और गम्भीरता लाना चाहता था। "श्रील प्रभुपाद," अमरेन्द्र ने पूछा "हम लोगों से कृष्णभावनामृत कैसे अपनवा सकते हैं? हमें क्या कहना चाहिए, जब हम लोगों के पास प्रचार करने जाएं? हम क्या कह सकते हैं कि लोग इसे स्वीकार कर लें?" उसकी आवाज भारी और शक्तिपूर्ण थी, जो कार्य की मांग कर रही थी।

"तुम उनसे केवल हरे कृष्ण कीर्तन करने को कहो," प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "वे स्वीकार करते हैं या नहीं, यह उनका काम है। यह उनके और कृष्ण के बीच है। तुमने अपना कार्य कर दिया है। लोगों से यह कहकर कि, "हरे कृष्ण का जप कीजिए," तुमने कृष्ण के प्रति अपने कर्तव्य का पालन कर दिया है। राधावल्लभ ने पूछा "हम अपने मन को माया से कैसे हटा सकते हैं और उसे कृष्ण की ओर कैसे मोड़ सकते हैं?

"तुम्हें चाहिए कि मन को घसीट लो" प्रभुपाद ने कहा, "तुम्हें चाहिए कि मन को घसीट ले जाओ, हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे की ध्वनि-लहरों की ओर। और उन्होंने फिर दुहराया, "तुम्हें चाहिए कि मन को ध्वनि-लहरों की ओर घसीट ले जाओ।"

"अच्छा" प्रभुपाद ने चारों ओर देखा, "तो अब तुम सन्तुष्ट हो?"

भक्तों ने उत्तर दिया, "हाँ, श्रील प्रभुपाद। आपका बहुत-बहुत धन्यवाद।"

तब वे सभी चले गये। वे सब सहमत हुए कि यह उनके जीवन का सबसे महान् दिन

और सब से महान् रात थी और वे इसे कभी नहीं भूलेंगे।

• • •

अपने कुछ शिष्यों के साथ प्रभुपाद कार में बैठकर जैक्सनविले हवाई अड्डे गये और उनके अन्य भक्त अपनी अपनी गाड़ी में उनके पीछे-पीछे गये। हवाई अड्डे पर प्रभुपाद के बैठने के लिए वे अपने साथ मन्दिर का व्यास-आसन लेते गये। जब प्रभुपाद कार में यात्रा कर रहे थे तो उन्होंने अपनी आँखें बन्द कर लीं और विश्राम किया। कार के पीछे की सीट पर बैठकर भक्त प्रसाद का अवशेष खाते रहे।

हृदयानंद : *यह मेरी उद्भावना थी कि प्रभुपाद का व्यास-आसन हवाई अड्डे ले जाया जाये। मैं सोच रहा था, "मेरे गुरु महाराज उस सीट पर कैसे बैठेंगे जिस पर अन्य कर्मी बैठते हैं?" यह असम्भव लगता था। प्रभुपाद किस तरह अपना कमलवत् शरीर उन सीटों पर रखेंगे, उन सीटों पर बैठेंगे, जिन पर कर्मी बैठते हैं। इससे मैं बहुत परेशान था। व्यास-आसन अमरेन्द्र ने बनाया था और वह हर चीज टैंक जैसी बनाता था। व्यास-आसन का वजन जरूर कई सौ पौंड रहा होगा। चार या पांच भक्त उसे उठाकर ला सके थे।*

प्रभुपाद पहले पहुँच गये और व्यास-आसन वहाँ नहीं था। वे हवाई जहाज के बोर्डिंग दरवाजे के पास पहुँच गये, और व्यास-आसन तब तक नहीं पहुँचा था। मैं चिन्ता में था, क्योंकि मैं नहीं चाहता था कि वे आम सीट पर बैठें। मैंने सोचा यह मेरे लिए बड़े अपराध की बात होगी। तब मैंने हवाई अड्डे के दूर तक जाते गलियारे में देखा और पाया कि छह ब्रह्मचारी, जिनमें से आधे के पैरों में जूते नहीं थे, प्रभुपाद का व्यास-आसन लिए चले आ रहे थे। यह कितना भद्दा दृश्य था। प्रभुपाद वहाँ खड़े अविश्वास और खिन्नता के साथ यह दृश्य देखते रहे। अन्त में पसीने से तर और हाँफते हुए कई ब्रह्मचारी व्यास-आसन लेकर पहुँचे और उन्होंने प्रभुपाद के सामने उसे रख दिया। प्रभुपाद ने उसे तिरस्कार से देखा और आगे बढ़कर वे एक मामूली सीट पर बैठ गये।

अधिकतर भक्त प्रभुपाद के चरणों के निकट बैठ गये और 'गुरु अष्टक' गाकर गुरु महाराज की प्रार्थना करने लगे, हृदयानन्द उन लोगों को धर्मोपदेश करने लगा जो वहाँ खड़े थे और वह दृश्य देख रहे थे। उसके पास श्रील प्रभुपाद की कुछ पुस्तकें थीं और वह उन्हें वितरित करने का प्रयत्न कर रहा था। प्रभुपाद का ध्यान अपने निकट बैठे भक्तों की अपेक्षा हृदयानन्द के धर्मोपदेश पर अधिक था।

• • •

एक महीने से कुछ अधिक समय में आधा दर्जन नगरों में जाने के बाद श्रील प्रभुपाद

की अगली योजना लंदन जाने की थी। स्पष्टतः सारा संसार उनका कार्य-क्षेत्र हो गया था और उनका पर्यटन उनके इस विश्वास का व्यावहारिक परिपालन था कि कृष्णभावनामृत का दान लोगों में सर्वत्र करना चाहिए।

प्रभुपाद के व्यापक भ्रमणों और साहसपूर्ण धर्मोपदेश से यह धारणा पुरानी और पूर्वाग्रहपूर्ण सिद्ध हो गई थी कि *भगवद्‌गीता* और कृष्ण केवल हिन्दुओं के लिए थे। जाति, धर्म, राष्ट्र, लिंग, वर्ग आदि के कारण जो भी अवरोध थे, वे सब अब समाप्त हो गये थे। यह हिन्दू कहावत कि किसी स्वामी को सागर-पार नहीं जाना चाहिए, एक अंधविश्वास बन कर रह गई थी; इस कहावत का उद्देश्य शायद छोटे-मोटे स्वामियों की रक्षा करना था, परम सत्य के सन्देश को सर्वत्र फैलाने के मार्ग में बाधा डालना कदापि नहीं।

चैतन्य महाप्रभु की स्पष्ट इच्छा थी कि उनका नाम संसार के हर गाँव और हर नगर में सुनाई पड़े और किसी भी वैदिक आदेश से इसका निषेध न हो। हाँ, वैदिक शास्त्रों में यह शिक्षा अवश्य है कि भक्तों को एकान्त स्थान में रहना चाहिए और सांसारिक स्त्री-पुरुषों से बचना चाहिए; और वैदिक शास्त्र यह भी शिक्षा देते हैं कि भक्तों को चाहिए कि सरल-निरीह व्यक्तियों के मनों में उत्तेजना न उत्पन्न करें और अधार्मिकों को धर्मोपदेश न दें। एक वैदिक आदेश के अनुसार एक भक्त को किसी नास्तिक का मुख भी नहीं देखना चाहिए। लेकिन एक निष्ठावान आचार्य दया के उच्चतर सिद्धान्तों के अनुपालन में ऐसे विधि-विधानों का उल्लंघन कर सकता है, जो मुख्यतः नवदीक्षितों के संरक्षण और शुद्धीकरण के लिए बनाए जाते हैं।

और उस उच्चतर सिद्धान्त के समर्थन में भगवान् कृष्ण ने प्रतिज्ञा की थी, "मेरे भक्त का कभी विनाश नहीं होगा।" समर्पित धर्मोपदेशक, जो भगवान् चैतन्य के उच्चतम आदेशों के पालन में लगा होता है, सांसारिक लोगों से नित्य सम्पर्क के बावजूद प्रदूषणों से सुरक्षित रहता है। अपने आध्यात्मिक जीवन का खतरा उठाकर भी वह सांसारिक जीवों के पास जाता है और बदले में कृष्ण उसकी रक्षा करते हैं।

प्रभुपाद प्रत्येक के प्रति प्रत्येक स्थान में कृपालु थे। इसलिए वे जगद्-गुरु थे। जगद्-गुरु होने का यह तात्पर्य नहीं है कि कोई इस बात का दावा करे कि वह अन्य सभी से श्रेष्ठ है या वह संसार में सर्वोत्तम गुरु है। जगद्-गुरु का तात्पर्य यह है कि नारद मुनि की तरह कृष्णभावनामृत का एक धर्मोपदेशक हर जगह जाये, धर्मोपदेश करे, हर जगह अपने शिष्य बनाए। और श्रील प्रभुपाद यही करते थे।

संयुक्त राज्य में एक हवाई अड्डे पर पहुँचने पर श्रील प्रभुपाद ने कहा था कि योगी पूर्वकाल में तीन तरह से यात्रा करते थे—उड़न खटोले से, कबूतरों से और मंत्रों से। "तो आप आज अमरीकी वायुयान से क्यों आये हैं," एक संवाददाता ने चुनौती दी थी।" केवल

तुम लोगों की तरह होने के लिए।" श्रील प्रभुपाद ने मुसकराते हुए कहा था।

किन्तु यह बात वास्तव में कोई कम विस्मयजनक नहीं थी कि प्रभुपाद किसी असामान्य रहस्यपूर्ण शक्ति के माध्यम से न आकर जेट वायुवान से आये थे। विस्मय की बात यह थी कि वे सदैव यात्रा कर रहे थे और वे जहाँ भी जाते थे, वहाँ कृष्णभावनामृत के सन्देश के बारे में बोलते थे, विश्वासहीनों में विश्वास पैदा करते थे और कलि-युगीन निम्न कोटि के व्यक्तियों को शुद्ध वैष्णवों में बदलते थे।

श्रील प्रभुपाद, निस्वार्थ और दयापूर्ण यात्राएँ करने के साथ दिव्य साहित्य का भी सृजन और वितरण कर रहे थे। संसार-भर में फैले उनके पैंसठ केन्द्रों के शिष्य कृतज्ञतापूर्वक उनकी सहायता करने की भूमिका स्वीकार कर रहे थे और उनको आश्वस्त कर रहे थे कि वे अपने-अपने क्षेत्रों में लोंगों को धर्मोपदेश देने में समर्थ थे और प्रभुपाद को चाहिए कि वे कृष्णभावनामृत की सीमाओं का पूरे आत्मबल के साथ विस्तार करते रहें और लोगों को अधिकाधिक दिव्य साहित्य देते रहें। उनके शिष्य विशेष रूप से चाहते थे कि *श्रीमद्‌भागवत* का अनुवाद करने के लिए प्रभुपाद को अधिक समय मिले, क्योंकि उन्होंने शिष्यों को बताया था कि उनकी यही इच्छा थी। वे प्रायः कहा करते थे कि यदि उन्हें *श्रीमद्‌भागवत* के अनुवाद में समय लगाने को मिले, तो वे यात्रा करना बन्द कर देगें। किन्तु लम्बे समय तक वे यात्रा बन्द नहीं कर सकते थे। यदि उन्हें *भागवत* पर एकाग्र-चित्त होने के लिए पर्याप्त शान्ति और उपयुक्त स्थान मिल भी जाता था, तो कर्तव्यवश उन्हें यात्रा पर निकलना पड़ता था। नये लोगों से मिलने के लिए, किसी नये स्थान में संकीर्तन आरम्भ कराने के लिए या यह निश्चय करने के लिए कि उनका आन्दोलन निष्कंटक उन्नति कर रहा है।

अतः प्रभुपाद ने इसे नित्य का नियम बना लिया था कि वे जहाँ कहीं भी जाते थे, वहाँ हर दिन कुछ घंटे *श्रीमद्‌भागवत* का अनुवाद करने में लगाते थे। उनके पास एक अटैची थी, जिसमें वे संस्कृत के *भागवत* और उनके तात्पर्य रखते थे और एक दूसरी अटैची डिक्टेशन लेने वाली मशीन के लिए थी। वे जहाँ भी होते थे, आधी रात को उठ जाते थे, डिक्टेशन लिखने वाली मशीन और *भागवत* के संस्कृत और बंगाली संस्करण लेकर बैठ जाते थे और जहाँ पिछली बार समाप्त किया था, उसके आगे बढ़ते हुए, श्लोकों का अंग्रेजी में अनुवाद करते थे और भक्तिवेदान्त तात्पर्य लिखते जाते थे। इस प्रकार उनकी व्यस्त यात्राएँ और अनुवाद साथ-साथ चलते रहते थे। ●